# भारतीय नारी
## अतीत से वर्तमान तक

डॉ. सतीश चन्द्र मित्तल

॥ नामूलं लिख्यते किञ्चित् ॥

प्रकाशन-विभाग

अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना

नयी दिल्ली-110 055

# भारतीय नारी
## अतीत से वर्तमान तक

by Dr. Satish Chandra Mittal

*Published by:*

॥ नामूलं लिख्यते किञ्चित् ॥

PUBLICATIONS DEPARTMENT
Akhila Bhāratīya Itihāsa Saṅkalana Yojanā
Baba Sahib Apte Smriti Bhawan, 'Keshav Kunj',
Jhandewalan, New Delhi-110 055
Ph.: 011-23675667
e-mail : abisy84@gmail.com
Visit us at : www.itihassankalan.org, www.abisy.org

© Copyright : ABISY

First Edition : Kali Yugābda 5117, i.e. 2015 CE

ISBN : 978-93-82424-22-2

Contribution : ₹ 25/-

Typesetting & Cover Design by:
Mukesh Upadhyaya

Printed at:
Printech International
B-14, DSIDC Complex,
Jhilmil Industrial Area, Delhi-110095
Mob.: 09582225848, 09811025848

# भारतीय नारी
## अतीत से वर्तमान तक

भारत विश्व का प्राचीनतम देश एवं जीवित राष्ट्र है । यह सर्वमान्य है कि किसी भी प्राचीन सभ्यताओं में नारी को इतना गौरव, गरिमा तथा उच्चतम सम्मान नहीं दिया गया, जितना भारत ने । यह भी नितांत सत्य है कि कोई भी धर्मग्रन्थ, दर्शन, शिक्षाशास्त्र, साहित्य, भाषा तथा इतिहास नारी का इतना ऋणी अनुभव नहीं करता, जितना भारतीय जनमानस । नारी अपने विभिन्न रूपों– माँ, पत्नी, बहिन तथा पुत्री– में सर्वदा पूजनीया तथा श्रद्धा की पात्र रही है। नारी को साक्षात् शक्ति तथा भक्ति का अवतार माना गया है । नर को नारी से ही माना गया है । उसे सृष्टि का आधार माना गया है । अतीत से वर्तमान तक भारत के ऋषियों-मनीषियों ने, दार्शनिकों एवं लेखकों, चिंतकों ने उसे निर्मला, अत्यंत पवित्र तथा श्रद्धा कहा है ।

### विभिन्न रूपों में भारतीय नारी

यदि इस लेख में भारतीय नारी के माँ तथा पत्नी के रूप का ही ध्यान करें तो वह विश्व में अन्यत्र दुर्लभ है । भारतीय चिन्तन में नारी के मातृरूप की सदैव वन्दना की गई है। इस दृष्टि से ईश्वर के पश्चात् माँ को ही स्थान दिया गया है । वेदों से



वर्तमान तक सभी ग्रन्थों में माँ को दिव्य, सर्वश्रेष्ठ तथा पूजनीय स्थान दिया गया है। *अथर्ववेद* में 'पृथिवीसूक्त' अथवा 'भूमिसूक्त' में भूमि को माता कहा गया है। **'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** अर्थात् यह भूमि मेरी माता है।[1] **'सा नो भूमिवि सृजतां माता पुत्रय में पयम्'** यानि भूमि मेरी माता है जो मुझे दूध पिलाती है ।[2] इसमें भूमि अथवा मातृभूमि के प्रति 63 अत्यंत भावपूर्ण समर्पित मन्त्रों में वन्दना की गई है। महर्षि मनु ने माँ के स्थान को अत्यंत गौरवपूर्ण बताते हुए लिखा है :

**'उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता ।**
**सहस्रं तु पितृन्माता गौरवेणातिरिच्यते ॥'** [3]

'अर्थात् दस उपाध्यायों की अपेक्षा आचार्य, सौ आचार्यों की अपेक्षा पिता और सहस्र पिताओं की अपेक्षा माता का गौरव अधिक है।' उपनिषदों में **'मातृदेवो भव', 'पितृदेव भव'** कहकर माँ को प्रथम स्थान दिया गया है। *महाभारत* में लिखा है: **'गुरुणां चैव सर्वेषां माता परमको गुरुः'** [4] अर्थात् सभी गुरुजनों में माता को परम गुरु माना गया है। पुराणों ने माँ को परम गुरु माना है । लिखा है :

**'पतिता गुरवस्त्या माता च न कथञ्चन ।**
**गर्भधारणपोषाभ्यां तेन माता गरीयसी ॥'** [5]

अर्थात्, 'पतित गुरु भी त्याज्य है पर माता किसी प्रकार भी त्याज्य नहीं है । गर्भकाल में धारण-पोषण करने के कारण माता का गौरव, गुरुजनों से भी अधिक है ।' पुराणों में एक अन्य स्थान पर मिलता है– **'सर्वन्द्येन यतिना प्रसूर्वन्द्या प्रयत्नतः'**[6] अर्थात् सबके वन्दनीय संन्यासी को भी माता की प्रयत्नपूर्वक वन्दना करनी चाहिए । भारत में *देवीभागवतपुराण, मार्कण्डेयपुराण* आदि महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ मातृशक्ति पर ही रचे गए हैं ।

---

1. *अथर्ववेद*, 12.1.12; डॉ० राधाकुमुद मुखर्जी, *नेशनलिज्म एण्ड हिन्दू कल्चर* (संशोधित संस्करण, 1995, दिल्ली), पृ० 12
2. *अथर्ववेद*, 12.1.10
3. *मनुस्मृति*, 2.145
4. *महाभारत*, आदिपर्व, 195.96
5. *स्कन्दपुराण*, कौमारिकाखण्ड, 6.7; *मत्स्यपुराण* 227.150
6. *स्कन्दपुराण*, काशीखण्ड, 11.50

प्राय: सभी प्राचीन संस्कृत तथा शास्त्रीय ग्रन्थों में भारतीय नारी को माँ के रूप में सर्वोच्च स्थान दिया गया है । माँ को लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती के रूप में माना गया है। मातृशक्ति के रूप में भारतीय इतिहास अनेक प्रसंगों तथा घटनाओं से भरपूर है। उदाहरण के लिए जब यक्ष ने युधिष्ठिर से प्रश्न पूछा कि **'पृथिवी से भारी गरिमामयी क्या है?** तो युधिष्ठिर ने सहज भाव से उत्तर दिया माता । माता से बढ़कर कुछ नहीं है। भारतीय इतिहास माँ अनुसूया, माँ सीता, माँ कुन्ती व माँ गान्धारी आदि अनेक श्रेष्ठ एवं पवित्र माताओं से जुड़ा है जिससे कोई भी व्यक्ति मार्गदर्शन से अपना जीवन सार्थक तथा धन्य कर सकता है ।

वर्तमान काल में भी अनेक राष्ट्रपुरुषों ने सर्वप्रथम माता को स्थान दिया है । स्वामी रामकृष्ण परमहंस (1836-1886) कहते थे, 'हे भगवान् मैं किस नाम से आपको संबोधित करूँ ? मानव के शब्दकोश में 'माँ' से बढ़कर पवित्र शब्द कोई दूसरा नहीं है जिससे मैं आपको पुकारूँ ! अत: मैं शिशु के समान आपको माँ, माँ कहकर पुकारता हूँ।'[7]

स्वामी विवेकानन्द (1863-1902) ने पाश्चात्य तथा भारत में नारीत्व में अन्तर स्पष्ट करते हुए 18 जनवरी, 1900 ई० को कैलीफोर्निया में बतलाया कि इस देश में चचेरी बहिन से विवाह पूर्णत: वैधानिक माना जाता है, किन्तु भारतवर्ष में यह केवल गैरकानूनी ही नहीं, बल्कि इसे व्यभिचार-सदृश महान् अपराध माना जाता है।[8] उन्होंने बतलाया कि भारत में स्त्री-जीवन का आरम्भ और अन्त मातृत्व से ही होता है। 'स्त्री' कहने से मातृत्व का ही भान होता है। विश्व में 'माँ' नाम से अत्यधिक पवित्र और दूसरा स्थान कौन-सा नाम है।[9] मातृत्व में महानतम, स्वार्थशून्यता, कष्टसहिष्णुता, क्षमाशीलता का भाव निहित है । उन्होंने पुन: कहा कि हम तो छोटी-सी लड़की को भी माँ कहते हैं।[10] जबकि पश्चिम में स्त्री पत्नी

7. उद्धरित, हरवंशलाल ओबराय एवं स्वामी संवित् सुबोध गिरि, *भारतीय परम्परा में नारी और मातृत्व के पंचविध रूप* (बीकानेर, 2014), पृ० 40
8. स्वामी विवेकानन्द, *विवेकानन्द साहित्य*, भाग 1, (अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 1989) पृ० 308
9. *वही*, पृ० 309
10. *वही*, पृ० 311



है। पश्चिम में यदि उसे माँ कहें तो वह दहल उठती है।[11] स्वामी विवेकानन्द ने देखा कि पश्चिम में पुत्र भी अपनी माँ का नाम लेकर बोलता है।[12] उन्होंने नारी की अवस्था को किसी भी राष्ट्र का थर्मामीटर बतलाया।[13] उन्होंने किसी भी स्थान पर महिलाओं को संस्कृति का संरक्षक माना है।[14] वह महिला को सांस्कृतिक उन्नति तथा आध्यात्मिकता का एक सच्चा चिह्न (इण्डैक्स) मानते हैं ।[15] स्वामी रामतीर्थ ने अमेरिका में अपने भाषण में कहा, "माँ, निष्काम कर्मयोग की मूर्ति है ।"

भारतीय दर्शन में नारी का दूसरा महत्त्वपूर्ण संबंध उसका पत्नी-रूप रहा है। भारतीय संस्कृति में उसे सखा, अर्धांगिनी, सहचारिणी, सहकर्मी आदि विभिन्न भावों से व्यक्त किया गया है। भारतीय चिन्तन में स्त्री और पुरुष दो व्यक्ति के रूप में नहीं बल्कि एक सामाजिक परिवार की सबसे छोटी इकाई के रूप में व्यक्त किये गये हैं। नर-नारी भेद शरीरगत है न कि आत्मागत । दोनों को मिलाकर अर्धनारीश्वर की कल्पना की गई है क्योंकि आत्मा के अन्दर न पुरुषत्व है और न स्त्रीत्व ।

दोनों को समाज की लघुत्तम इकाई के रूप में विवाह संस्कार बाँधता है, जिसे अत्यन्त पवित्र माना गया है। इसे एक महान् यज्ञ, जीवनधाराओं का संगम माना गया है। 'सप्तपदी' हिंदू समाज के मस्तिष्क का गौरव और समाज रचना की सर्वोच्च पताका कही गई है। विश्व में कहीं भी विवाह को इतना महत्त्व नहीं दिया गया है जितना भारत में। इसे प्रसिद्ध 16 संस्कारों में से 13वाँ संस्कार माना गया है।

भारत के अनेक श्रेष्ठ विद्वानों ने इस विवाह-संस्कार को अत्यधिक महत्त्व दिया है। कुछ उदाहरण देना उपयुक्त होगा। श्रीशंकराचार्य ने लिखा है, "हिंदू विवाह आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक– सर्वांगीण उन्नति का

10. स्वामी विवेकानन्द, *विवेकानन्द साहित्य*, भाग 1, पृ० 311
11. *वही*, पृ० 311
12. *वही*, पृ० 319
13. *वही*, पृ० 324
14. स्वामी तथागत, मैडिटेशन ऑन स्वामी विवेकानन्द (न्यूयॉर्क, 2000), पृ० 200
15. *वही*, पृ० 200

एक प्रधान साधन है। इसके द्वारा पति-पत्नी जन्म-जन्मांतर, युग-युगान्तर एवं कल्प-कल्पांतर के एक दिव्य अलौकिक सूत्र में आबद्ध होते हैं ।" स्वामी विवेकानन्द ने बताया, विवाह इन्द्रिय-सुख के निमित्त नहीं, वरन् मानव-वंश को आगे चलाने के लिए है । विवाह का भारतीय आदर्श यही है । समाज में उसी प्रकार के विवाह का प्रसार होता है जिसमें समाज का अधिक-से-अधिक कल्याण साधित हो सके। अतएव पति-पत्नी को समाज और देश के कल्याण साधन के निमित्त अपने व्यक्तिगत आनन्द और सुख को आहुति देने को सदा तत्पर रहना चाहिए ।" विश्व के महान् दार्शनिक तथा भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन ने माना, विवाह एक ऐसी भागीदारी है जिसमें धैर्य की आवश्यकता है। यह एक आकस्मिक प्रयोग नहीं वरन् गम्भीर अनुभूति है, जो सुकुमार और भंगुर होते हुए भी भक्ति एवं आदान-प्रदान की भावना से वृद्धि को प्राप्त होती है ।

देश के अनेक विद्वानों ने विवाह के सन्दर्भ में सेमेटिक अथवा पाश्चात्य चिन्तन को पूर्णत नकार दिया है । भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत के विद्वान् श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "विवाह संस्कार है, इकरारनामा नहीं, जिसे जब मन में आया छोड़ दिया या तोड़ दिया । हिंदू-विवाह अविच्छेद है।" श्री दादा धर्माधिकारी ने लिखा, "विवाह कामोपयोग का लाइसेंस नहीं, काम-संयम का संस्कार है ।" इसी भाँति प्रसिद्ध चिन्तक श्री रामनाथ सुमन ने कहा, "अन्य देशों और धर्मों में वह दो व्यक्तियों के बीच सांसारिक कर्त्तव्य के निर्वाह के लिए किया गया समझौता है। हमारे यहाँ दो जीवन समाप्त हो जाते हैं, मिलकर एक बनते हैं ।"

अत: संक्षेप में विवाह को एक पवित्र तथा धार्मिक संस्कार माना गया है। यदि नारी की स्थिति को विवाह-संस्कार के मापदण्ड से देखें तो विश्व में किसी भी देश से तुलना करने पर भारतीय नारी की अवस्था सर्वोपरि है ।

*महाभारत* में भीष्म पितामह[16] ने समाज की तत्कालीन तथा भावी स्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए विवाह के आठ प्रकारों का वर्णन किया है। ये हैं- (1) असुर विवाह - धन लेकर कन्यादान, (2) राक्षस विवाह - बलपूर्वक

16. *महाभारत* भीष्मपर्व, 102.14-15; श्री कुंजबिहारी जालान, *द्वापरकालीन भारत* (शहादरा, दिल्ली, 2015), पृ० 200



कन्या का हरण, (3) गन्धर्व विवाह - वर कन्या की अनुमति से, (4) पैशाच विवाह - अचेतावस्था में कन्या को उठा ले जाना, (5) प्राजापत्य विवाह - पिता द्वारा कन्यादान, (6) देव विवाह - यज्ञ द्वारा ऋत्विज को कन्या देना, (7) स्वयंवर द्वारा और (8) स्वयंवर के समस्त राजाओं को हराकर कन्या प्राप्त करना। उपर्युक्त विवाह के प्रकारों में पहले चार को निकृष्ट तथा बाद के चार विवाहों को श्रेष्ठ माना गया है ।

## विभिन्न युगों में नारी की स्थिति :

वैदिक काल में नारी की स्थिति सर्वोत्तम थी। स्त्री-पुरुष संबंध 'सखा' भाव के होते थे। *ऐतरेयब्राह्मण*[17] तथा *महाभारत*[18] में प्रखरता से इन संबंधों को माना गया है। दोनों के समान अधिकार होते थे। *ऋग्वेद* में उन दोनों को 'दम्पति' अर्थात घर के संयुक्त स्वामी कहा। दोनों को समान शिक्षा के अधिकार थे। लड़कियों का उपनयन-संस्कार होता था। वे चाहें तो आजीवन ब्रह्मचर्य जीवन बिता सकती थीं। लड़कियों की गतिशीलता में कोई रुकावट न थी । विधवा-विवाह होते थे। अनेक नारियाँ मन्त्रद्रष्टा तथा ब्रह्मावादिनी थीं, जैसे- घोषा, लोपमुद्रा, शाश्वती, अपाला, इन्द्राणि, सिकता निवानरी आदि। इसमें अनेक वैदिक मन्त्रों तथा श्लोकों की रचयिता थीं।[19] एक विदुषी इतिहासकार[20] ने हिंदू समाज में दाम्पत्य संबंधों के बदलते रूपों का सूक्ष्म विश्लेषण करते समय, समाज की बदलती परिस्थितियों के अनुसार इसके विकास क्रम को तीन भागों में बाँटा, जिन्हें क्रमश: सखा-युग, गुरु-युग तथा देवता-युग कहा है। यद्यपि इसकी विभाजक-रेखा निश्चित करना संभव नहीं है, परन्तु यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता था कि वैदिक युग की स्थिति सदैव एक-सी न रही । नारी के लिए पति का सखा-भाव निरन्तर कम होता गया ।

17. **'सखा है भार्या'** -*ऐतरेयब्राह्मण*

18. **'भार्या श्रेष्ठतम सखा'** -*महाभारत*, आदिपर्व, 1.74.40

19. डॉ० डी०सी० चौबे एवं प्रो० रजनी मीणा, *भारत की संस्कृति की धारायें* (जयपुर 2015), पृ० 370; विस्तार के लिए देखें, *कल्याण* का 'नारी अंक' (गोरखपुर)

20. प्रो० आराधना, *प्राचीन भारतीय वाङ्मय में वर्णित कतिपय प्रसंग* (गाज़ियाबाद, 2012), देखें, 'पति का प्रभुत्व और उसका परिवर्तित स्वरूप', पृ० 155-166

बदलती हुई परिस्थिति में नारी की स्थिति में अन्तर आता गया । इसे निरन्तरता तथा सामाजिक परिवर्तन के रूप में में देखा जा सकता है । पुरुष तथा स्त्री में सखा भाव के स्थान पर पुरुष का वर्चस्व बढ़ता गया । शिक्षा के क्षेत्र में नारी-शिक्षा का दायरा धीरे-धीरे सीमित हो गया । सामान्यत: बाद में शिक्षा घर पर ही लेने लगी । स्वाभाविक रूप से पति, नारी का शिक्षक अथवा गुरु बन गया । यद्यपि स्वयंवर की प्रथा बनी रही । नियोग तथा विधवा-विवाह होते रहे । ब्राह्मण तथा उपनिषद्-ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि अनेक नारियाँ दार्शनिक तथा अत्यंत विदुषी थीं, जैसे– मैत्रेयी, गार्गी तथा अत्रेयी ।

सूत्र, स्मृति तथा महाकाव्य-काल में नारी की अवस्था पतनोन्मुख होती गई । सूत्र-साहित्य में पारिवारिक जीवन की श्रेष्ठता बनी रही। *आपस्तम्बधर्मसूत्र* में कहा गया कि पाणिग्रहण में पति-पत्नी सब कर्मों को मिलाकर करते हैं, उनका पुण्यफल और सम्पत्ति-ग्रहण संयुक्त होता है । पर विवाह की आयु कम होने तथा शिक्षा के कमी से पति का स्थान देवता की भाँति होता गया । सूत्रकार शंख ने कहा, 'पति के कोढ़ी, पतित (जातिच्युत), अंगहीन या बीमार होने पर भी पत्नी, पति से द्वेष न करे, स्त्रियों के लिए पति देवता है।" *मनुस्मृति, रामायण* तथा *महाभारत* में इस प्रकार के अनेक प्रसंग हैं ।

अपने देश में याज्ञवल्क्य, नारद, बृहस्पति, कात्यायन आदि अनेक स्मृतिकार हुए । परन्तु महर्षि मनु ने समूचे राष्ट्र को एक व्यवस्थित, नियमबद्ध और नैतिक जीवन जीने की पद्धति दी । भारत को एक सांस्कृतिक, बलशाली तथा नैतिक राष्ट्र बनाए रखने के लिए कुछ कठोर नियम भी बनाये । मनु[21] ने अनेक विद्वानों की भाँति **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:'** का भाव प्रकट किया अर्थात् 'जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवताओं का वास होता है ।' जहाँ मनु ने स्त्री तथा पुरुष– दोनों में एकत्व को स्वीकार किया[22] तथा मानव मन में पुरुषत्व तथा स्त्रीत्व के तत्त्वों में एक निश्चित सामञ्जस्य बतलाया, वहाँ कुछ कठोर

21. *मनुस्मृति*, 11.56
22. आर०एम०दास, *वूमैन इन मनु एण्ड हिज़ सेवन कमैण्टेटर्स* (बोधगया, 1962) पृ० 42



नियम भी बनाये ।[23] उन्होंने स्त्री के अधिकार-क्षेत्र को सीमित करते हुए उसे बचपन में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र की देखरेख में जीवन व्यतीत करने को कहा । उन्होंने नारी अत्याचारों के प्रति कठोर प्रायश्चित्त की व्यवस्था की । जैसे गुरुपत्नी से संभोग करने को 'महापातक'[24] बतलाया । उसने सहोदरा, बहिन, कुमारी, चाण्डाली, मित्र और पुत्र की स्त्री से व्यभिचार को भी गुरु की पत्नी के साथ व्यभिचार के समान बताया ।[25] इसी भाँति परस्त्री-गमन, कन्या से बलात्कार, स्त्री और संतान को बेचना[26] आदि को तथा मद्यपान करनेवाली स्त्री से सम्भोग आदि को पातक माना है।[27] साथ ही उन्होंने पुरुषों तथा स्त्रियों– देनों को अलग रखने के कठोर नियम भी बताये । यहाँ तक कि विद्वान् व्यक्ति को भी अकेले में अपनी माता, बहिन या पुत्री से न मिलने की बात की ।[28]

छठी शताब्दी ई०पू० से भारत के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में घुसकर अनेक विदेशी आक्रमण हुए, जिससे भयंकर नरसंहार, अपार लूटमार तथा जन-धन की हानि हुई । इनमें ईरानी, ग्रीक, यूनानी, इण्डो-बैक्टिरियन, इण्डो-पार्थियन, शक, कुषाण तथा हूण-आक्रमण प्रमुख थे । इन्होंने देश की सामाजिक तथा धार्मिक व्यवस्थाओं को प्रभावित किया । नारी के जीवन को प्रभावित किया । समाज में सती-प्रथा को महत्त्व मिला । नियोग तथा पुनर्विवाह की प्रथाएँ बन्द हो गयीं । विधवा-विवाह प्राय: बन्द हो गये । विवाह की आयु घटी ।

मुस्लिम-आक्रमणों के पश्चात् महिलाओं की दशा और कमज़ोर हुई । अनेक कुप्रथाओं ने जन्म लिया या बढ़ीं । समाज में पर्दा-प्रथा का प्रचलन हुआ जिससे महिलाओं का सार्वजनिक जीवन से नाता प्राय: समाप्त हो गया । सती-प्रथा को बढ़ावा मिला । बहुविवाह तथा बालविवाह बढ़े। बाल-विधवाओं

23. कठोर नियमों के विस्तार के लिए देखें, प्रो० आराधना, पूर्वोक्त, देंखे *मनुस्मृति में प्रायश्चित विधान : एक मूल्यांकन*, पृ० 107-120
24. *मनुस्मृति* 11.54
25. *वही*, 11.58
26. *वही*, 11.59-62
27. *वही*, 11.66-68
28. *वही*, 11.215-17

की संख्या बढ़ी । आठवीं शताब्दी से विधवाओं के मुण्डन का भी प्रचलन हो गया। देश के दक्षिण भाग में – तमिलनाडु तथा उड़ीसा में देवदासी-प्रथा प्रचलित थी। हिंदू-स्त्रियों को मुसलमानों के घरों में काम करना पड़ता था। तुर्की-शासन साढ़े तीन सौ वर्षों से भी अधिक समय तक चला । इस काल में लाखों स्त्रियाँ तथा बच्चे मुसलमान बनाकर दासों के रूप में बेच दिये गये।[29] अनेक हिंदू-सामन्तों को ये शासक-वर्ग अपनी हवस का शिकार बनाते । पहले उन्हें मुसलमान बनाते और तब उनके साथ विवाह करते थे ।[30] इब्नबतूता ने इन आततायियों से बचने के लिए सती एवं जौहर-प्रथा का विस्तार से वर्णन किया है। मुग़लकाल में महिलाओं की दशा और भी दयनीय हो गई थी। मुग़लों में हरम-प्रथा थी जिसमें कई हज़ार महिलाएँ होती थीं ।[31] इस्लाम के प्रभाव से पर्दा-प्रथा तथा बालविवाह सामान्य हो गये थे ।[32] पुत्री का जन्म अशुभ समझा जाने लगा था । बालविवाह से बाल-विधवाओं की संख्या बढ़ी तथा उन्हें पुनर्विवाह की आज्ञा न थी । परन्तु अभी भी हिंदुओं में तलाक-प्रथा न थी जो मुसलमानों में सामान्य थी । हिंदुओं में सामान्यत: एक विवाह की प्रथा थी जबकि मुसलमानों में एक पुरुष को चार विवाह करने की स्वीकृति थी । समाज में दहेज-प्रथा प्रचलित थी । अकबर के काल में जहाँ दिल्ली में मीना बाजार-जैसी घृणास्पद व्यवस्था प्रारम्भ हुई थी, वहाँ जहाँगीर तथा शाहजहाँ अपने ऐश्वर्य तथा विलासिता के लिए जाने जाते थे । ऐसा माना जाता है कि अकबर तथा औरंगज़ेब ने दहेज-प्रथा रोकने के प्रयत्न किए थे ।

राजपूतों में स्त्रियों को, विशेषकर माता को विशेष सम्मान प्राप्त था । राजा अपने जन्मदिन पर अपने माता के दर्शन के लिए जाता था । राजा माँ के दूध की लाज के लिए अपने प्राण तक न्यौछावर कर देते थे। मुस्लिम-आक्रांताओं तथा

29. डॉ० आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव, *भारत का इतिहास* (1000-1707) (आगरा, 1965) पृ० 302
30. *वही*, पृ० 302
31. के०एस०लाल, द *मुगल हरम* (नई दिल्ली, 1988)
32. डॉ० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, द *मुग़ल एम्पायर* (1526-1803) दिल्ली, 1952) पृ० 512



उनके अत्याचारी शासनकाल में अनेक माताओं, बहिनों तथा पुत्रियों ने शील की रक्षा करने हेतु अपने बलिदान दिये । अपने पुत्रों को प्रेरणा दी । इसमें जहाँ तुर्कों के शासनकाल में राजा दाहिर की पत्नी व उसकी दो पुत्रियाँ– सूरज देवी तथा परिमल देवी,[33] रानी पद्मिनी,[34] गुजरात के राय कर्णदेव द्वितीय की पुत्री देवल रानी[35] विख्यात हुईं, वहाँ मुग़लकाल में गोंडवाना की रानी दुर्गावती प्रसिद्ध हुईं । रानी कर्णावती, मीराबाई तथा ताराबाई प्रसिद्ध हैं ।[36] गुरु गोविन्द सिंह की माँ गूजरी तथा शिवाजी की माँ जीजाबाई अपने मातृत्व के लिए विश्वविख्यात हैं ।

सन् 1803 ई० में भारत में अंग्रेज़ों का ईस्ट इण्डिया कम्पनी के रूप में शासन प्रारम्भ हुआ, जो 1857 में सीधे ब्रिटिश प्रशासन के रूप में, 1947 ई० तक रहा । ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में भारतीय महिलाओं की दशा शोचनीय तथा दयनीय थी । इसका मुख्य कारण धार्मिक तथा सामाजिक प्रतिबन्ध थे । पण्डित-वर्ग का प्रभुत्व हो गया था । अज्ञानता और अन्धविश्वास के बीच ऐसी सामाजिक प्रथाएँ भी धार्मिक दृष्टि से मान्य प्रतीत होने लगीं, जो वास्तव में हानिकारक तथा ख़तरनाक थी । पण्डित-वर्ग किसी भी सामाजिक बुराई को शास्त्रोचित बनाकर इसे धार्मिक कार्य का रूप दे सकता था ।[37] समाज में अनेक प्रथाएँ यथावत् ही नहीं बल्कि विकृत हो गई थीं । कन्या-हत्या, कन्या-विक्रय, बालविवाह, पर्दा-प्रथा प्रचलित थी। पर्दे की प्रथा से अशिक्षा तथा अज्ञानता बढ़ी । महिलाओं में कई बीमारियाँ भी पनपीं । एक आधुनिक विद्वान् के अनुसार महिलाओं में तपेदिक की बीमारी बढ़ी । यह प्रथा दक्षिण भारत तथा प्राय: निम्न वर्ग में न थी । कन्या-हत्या की कुप्रथा मुख्यत: उच्च वर्ग में थी । बनारस, काठियावाड़ तथा कच्छ के जरीजा राजपूतों, जोधपुर के राठौरों, जयपुर के

33. डॉ० सतीशचन्द्र मित्तल, *भारत में राष्ट्रीयता का स्वरूप (प्रारम्भ से मुस्लिम काल तक)* (नई दिल्ली, 2013) पृ० 87
34. *वही*, पृ० 97
35. *वही*, पृ० 98
36. डॉ० आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव, द *मुगल एम्पायर*, पृ० 512
37. पी०एन० चोपड़ा, बी०एन०पुरी एवं एम०एन०दास, *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक इतिहास*, भाग-तीन (नई दिल्ली, 1996)

कच्छवाहों, जालन्धर के वेदी, कुछ कबीलों तथा मेवात के मुसलमानों में मुख्य रूप से ही प्रचलित थी ।[38] बालविवाह की संख्या बढ़ती जा रही थी । कन्या के युवती होने से पूर्व ही समाज कन्याओं का विवाह अपना नैतिक दायित्व मानने लगा था । बहुविवाह समान्यत: अमीर तथा सम्पन्न लोगों में थी । 19वीं शताब्दी में बंगाल तथा मिथिला के ब्राह्मणों में बहुविवाह की प्रथा अधिक थी । ऐसे भी माता-पिता थे जो एक कुलीन को अपनी सभी लड़कियाँ विवाह में दे देते थे । विधवा-विवाह निषिद्ध था । अत: उनकी जनसंख्या बढ़ती जा रही थी । 1891 की जनगणना के अनुसार भारत में 19 प्रतिशत हिंदू महिलाएँ विधवा थीं । विद्वान् पी०एन० बोस ने 5 वर्ष की आयु से लेकर 30 वर्ष की विधवाओं का सर्वेक्षण किया था ।[39] विधवाओं की बढ़ती जनसंख्या के साथ उनकी दशा भी दयनीय बनती जा रही थी । 1892 के सामाजिक सम्मेलन में प्रसिद्ध विद्वान् काशीनाथ गोविन्दनाथ ने उनकी वीभत्स दशा का वर्णन किया है।[40] सती-प्रथा मुख्यत: राजपुताना तथा बंगाल में प्रचलित थी । कई जगह उनके सतीस्थान पर 'सती-स्थल' भी बनाए जाते थे। सम्राट् अकबर, सिख-गुरु अमरदास तथा मराठा-पेशवाओं ने इसे रोकने के लिए प्रयत्न भी किए थे । देवदासी-प्रथा भी 19वीं शताब्दी तक आते-आते एक घृणास्पद प्रथा बन गई थी तथा इसका भयंकर रूप बना दिया गया था । इससे मठाधीश अपनी कामवासना की पूर्ति करते थे ।[41] इसी भाँति उच्च परिवारों की छोड़कर महिलाओं को प्रारम्भिक शिक्षा की भी सुविधा न थी । 1822-1835 ई० की सरकारी रिपोर्ट्स के दौरान जहाँ बंगाल, मद्रास तथा बम्बई प्रेसीडेंसियों में देशी प्राथमिक व उच्च शिक्षा के विकास का विस्तृत वर्णन है, वहाँ कन्या-शिक्षा का कोई वर्णन नहीं है । इसके अलावा अन्य प्रथाएँ, जैसे– कन्या-विक्रय, दास-प्रथा, अंतर्जातीय विवाह का निषेध आदि समाज में प्रचलित थीं ।

38. सतीश चन्द्र मित्तल, *भारत का सामाजिक-आर्थिक इतिहास* (1758-1947) (नई दिल्ली) 2005, पृ० 19
39. पी०एन०बोस, *ऐ हिस्ट्री ऑफ हिन्दू सिविलाईजेशन डयूरिंग द ब्रिटिश रूल*, भाग दो
40. डॉ० सतीश चन्द्र मित्तल, पूर्वोद्धृत, पृ० 20
41. सत्येन्द्र त्रिपाठी, *सामाजिक विघटन* (लखनऊ, 1973)



महिलाओं की दशा का विचार करते हुए भारतीय विद्वानों को यह नहीं भूलना चाहिए कि 1760 ई० में कलकत्ते पर कब्ज़ा होते ही अनेक विदेशी लेखकों, पर्यटकों तथा पादरियों ने भारत के सामाजिक जीवन तथा दशा का वर्णन मनमाने ढंग से, बढ़ा-चढ़ाकर, अतिरंजित किया है। उदाहरणत: एक पादरी ने कहा, 'तुम्हारे सब देवता राक्षस के अलावा कुछ नहीं हैं । तुम सब मूर्तिपूजा के अपराधी हो, नर्क में जाओगे ।' जे०एफ० ड्यूबे ने 1792 में ऐसी ही एक पुस्तक लिखी ।[42] हेनरी मार्टिन ने भारतीय समाज को एकाकी तथा पक्षपातपूर्ण बतलाया । एक स्कॉटिश पादरी अलैग्जैण्डर डफ ने भारतीयों को पूर्ण अनैतिकता में डूबा बताया । पाश्चात्य इतिहासकारों ने प्राय: भारत के समस्त रीति-रिवाजों तथा व्यवहारों को अनुचित, असन्तुलित तथा दोषपूर्ण वर्णन किया है । इनमें लॉर्ड मैकाले, जेम्स मिल, किपलिंग तथा मिस कैथाराइन मेयो जैसे लेखक हैं । प्राय: इनका वर्णन पूर्व नियोजित, एकाकी तथा अधूरा है ।[43] अत: इन्हें यथावत् स्वीकार नहीं किया जा सकता तथा इनके तथ्यपरक आकलन की आवश्यकता है ।[44] प्रसिद्ध ब्रिटेन के इवेनजिलिकल चार्ल्स ग्रांट (1746-1823) तथा ब्रिटिश प्राच्यविदों ने इसी पूर्वाग्रहों से भारत के सामाजिक तथा धार्मिक जीवन का वर्णन किया है ।

### अन्य धर्मों तथा पाश्चात्य जगत् में नारी की दशा

ईसाइयत, इस्लाम अथवा जेंद अवेस्ता में नारी की प्रारम्भिक अवस्था का वर्णन बड़ा घिनौना तथा घृणास्पद किया गया है । पवित्र बायबल में सृष्टि की उत्पत्ति परमेश्वर द्वारा सात दिन में बतलाई गई है। मानव की उत्पत्ति का वर्णन यहोबा (परमेश्वर) ने अदन देश में अपने द्वारा बनाये आदम से बताया है जिसमें आदम की एक पसली से नारी का जन्म माना है और तभी आदम ने कहा "यह मेरी हड्डियों की हड्डी और मेरे मांस का मांस है ।"[45] इसका नाम वूमैन (नारी)

42. जे०एफ० डयूबे, *हिन्दू मैनर्स कस्टम एण्ड सेरेमनीज* (लन्दन, 1768)
43. डॉ० सतीश चन्द्र मित्तल, पूर्वोक्त, पृ० 6
44. के०के०दत्त, *ए सोशल हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इण्डिया* (नयी दिल्ली, 1975) देखें इन्ट्रोडक्सन
45. पवित्र शास्त्र बायबल (*इंडियन बाइबल लिटरेचर*, चेन्नई, 1995), पृ० 3

होगा क्योंकि यह मैन से निकली है। तभी से हौव्वा का जन्म हुआ । परन्तु अदन के बगीचे से एक वर्जित वृक्ष से फल तोड़कर खाने से उन दोनों को वहाँ से निष्कासित कर दिया तथा मानव की उत्पत्ति हुई । अर्थात् मानव की उत्पत्ति पाप (sin) से हुई तथा सृष्टि बनी । बायबल के पहले भाग 'जेनेसिस' में हब्बा को ईश्वर द्वारा शाप दिया गया तथा कहा, तेरी इच्छा पति के अधीन होगी, वह तुम पर शासन करेगा ।[46] ट्यूटन जाति में पति को अपनी पत्नी को मारने, बेचने और छोड़ने का अधिकार था । ईसाई जगत् में पत्नी पूर्णत: अपने पति के अधीन होती थी । सैण्ट पॉल ने कहा, 'पत्नियो ! तुम अपने पतियों की उस प्रकार अधीन हो जाओ, जैसे भगवान के अधीन होते हैं । ईसाइयत में 'काम' शैतान है, पाप है, अपराध है क्योंकि शैतान के उकसाने पर ही आदम ने हौवा के कहने पर ही अदन के उद्यान से फल खाया था ।

स्त्रियों के बारे में न केवल बायबल में बल्कि अपने यूनानी दार्शनिकों, यूरोपीयन साहित्यकारों एवं विद्वानों ने निकृष्ट विचार दिये हैं । यूनानी नाटककार थ्यूसीडाइडिस ने लिखा, 'स्त्रियाँ अच्छे काम करने में तो बाध्य हैं किन्तु सब प्रकार की बुराई करने में चतुर है ।'[47] दार्शनिक प्लेटो[48] (428-347 ई०पू०) ने अपने ग्रंथ में स्त्रियों को नौकरों का स्थान दिया है और वह स्त्री जाति को बुद्धि और गुण की दृष्टि से पुरुष से हीन समझा है । अत: यूनान में पत्नी घर की नौकरानी मात्र थी तथा उसका गुण चुपचाप रहना ही माना जाता था । रोम में विवाह के पश्चात् पति का पत्नी पर असीम प्रभुत्व स्थापित हो जाता था । ईसाई पादरियों की एक सभा सिनौड (Synod) में 558 ई० में महिलाओं के बारे में एक प्रश्न पूछा गया, 'वे मानव हैं या नहीं ।'

ईसाइयत की भाँति अन्य धर्मों में भी स्त्री को हेय माना गया है । पारसी धर्म में पति की अवहेलना करनेवाली स्त्री को 'डायन' कहा गया है । चीनियों की

46. *बाइबल* की पहली भाग जेनेसिस
47. थ्यूसीडाइडिस मीडिया 406
48. प्लेटो, रिपब्लिक 4.431, 5.455
49. स्मिथ, प्रोवर्ब्स ऑफ द चाइनीज, पृ० 265



कहावत है कि सर्वोत्तम कन्याएँ निकृष्टम लड़कों के बराबर भी नहीं हैं।[49] चीन में कनफ्यूसियस भी स्त्रियों पर आयुनुसार क्रमश: पिता, पति और पुत्र के नियन्त्रण रखना आवश्यक मानते हैं । इस्लाम में हजरत मुहम्मद की एक हदीस में पुरुषों के लिए सबसे बड़ी मुसीबत औरत बताया है । स्त्रियों को अपने सोने-चाँदी के जेवरों को दान दे देना चाहिए क्योंकि क़यामत के दिन वे अधिकतर नरक में जानेवाली होंगी ।[50]

मध्यकाल में सामान्यत: यूरोप अथवा मुस्लिम देशों में स्त्रियों को कोई अधिकार प्राप्त न थे । ईसाइयत में मानव का जन्म 'पाप' से माना गया है । अत: सृजन पाप है, 'काम शैतान है' कहा गया । विवाह भी न्यूनतम अपराध है । विवाह एक समझौता है । विवाह के पश्चात् भी पति-पत्नी के समागम पर चर्च के कड़े निषेध थे। निर्बन्ध भोग का अधिकार केवल पादरियों का रहा ।[51] पत्नी ही नहीं बल्कि मातृत्व को भी हेय दृष्टि से देखा गया। यूरोप के अनेक साहित्यकारों ने अपनी माँ को बड़ी निम्न स्तर की गालियाँ दीं कि वह उसे पाप के संसार में लाने की दोषी हैं ।

ईसाई समाज में 'काम' को दबाने के प्रयत्न हुए । स्वाभाविक रूप से इसने अनेक विकृतियों, कुण्ठाओं, कष्टों तथा कठिनाइयों को जन्म दिया । चर्च ने शताब्दियों से वहाँ के मानव जीवन को नर्क बना दिया । स्त्रियों का मनमाने ढंग से दुरुपयोग किया गया । कुछ विद्वानों[52] के अनुसार 'यूरोप में कैथोलिक तथा प्रोस्टेण्टों के बीच 500 वर्षों तक 90 लाख निर्दोष, सदाचारिणी, भावमयी श्रेष्ठ स्त्रियों को डायन तथा चुड़ैल घोषित कर ज़िन्दा जलाया, पानी में डुबोकर मारा, बीच से ज़िन्दा चीरा, घोड़े की पूँछ से बाँधकर सड़कों, गलियों में इस प्रकार दौड़ाया कि बँधी हुई स्त्री लहूलुहान होकर दम तोड़ दे । स्त्रियों को आँख छोड़कर सारे देह को ढककर रखना पड़ता था।' ईसाइयों के एक बड़े सम्प्रदाय[53] ने लाखों

50. लेन, स्पीचेज ऑफ मुहम्मद, पृ० 161
51. डॉ० हरवंशलाल ओबराय एवं स्वामी संवित् सुबोधगिरी, *पूर्वोद्धृत, पृ० 7*
52. वही, *पृ० 7*
53. वही, *पृ० 7*

की जननेन्द्रियाँ कटवा डालीं, स्त्रियों के स्तन कटवा डाले ताकि कामवासना से मुक्त हो जायें। संक्षेप में यही क्रम अरस्तु से लेकर रानी विक्टोरिया के युग तक चलता रहा । लॉर्ड मैकाले ने स्वीकार किया कि महिलाओं में अज्ञानता तथा अशिक्षा का बोलबाला है । मिल्टन तथा रूसो-जैसे विद्वानों ने महिलाओं को पुरुषा की अपेक्षा हीन माना । जहाँ ईसाई समाज ने चर्च के दबाव में कामवासना को दबाने का प्रयत्न किया, वहाँ मुस्लिम जगत् में इस्लाम में कामप्रवृत्ति को बहुत उभारा । नारी पुरुष की सम्पत्ति बन गई थी । पुरुष की दासी बन गई थी । मुस्लिम स्त्री को पति की खेती और जायदाद कहा गया । मुस्लिम पति को उसके मनचाहे भोग के असीमित अधिकार दिये गए । उन्मुक्त संभोग को बढ़ावा मिला । मुस्लिम देशों में अनेक बेगमों तथा रख़ैलों को प्रोत्साहन मिला । मुसलमानों में स्त्री ऐय्याशी तथा विलासिता का साधन बन गयी । स्वामी विवेकानन्द ने एशिया में मुस्लिम महिलाओं की दशा ज़्यादा दु:खद बतलाई है ।[54]

आधुनिक काल में यूरोप तथा अमेरिका में महिलाओं की दशा कष्टकारक तथा शोचनीय है । स्वामी विवेकानन्द ने सेमेटिक लोगों के कष्टकारक जीवन का हृदयविदारक वर्णन किया है। स्त्रियों को किसी प्रकार के धार्मिक कार्यों को करने का अधिकार नहीं है । यहाँ तक कि भोजन के लिए पक्षी मारना भी उनके लिए निषिद्ध है जबकि भारत में सहधर्मिनी के बिना कोई भी धार्मिक कार्य पूरा नहीं होता । स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका तथा पाश्चात्य देशों में अविवाहित युवा स्त्रियों के कष्टों तथा दुरावस्था को अत्यन्त कष्टदायक बतलाया है। एक स्थान पर मिशनरियों तथा चर्च की महिलाओं की भी चर्चा की है ।[55] उन्होंने बताया कि जब कोई नारी अपने पति खोजने का अधिक-से-अधिक प्रयत्न करती है तो वह सभी समुद्रतटीय स्थानों पर जाती है और किसी भी पुरुष को पकड़ पाने के लिए छल-छद्म से काम लेती है। जब वह अपने प्रयत्नों में असफल हो जाती है जैसा कि अमेरिका में कहते हैं 'ओल्ड मैड' हो जाती है तब वह चर्च में सम्मिलित हो जाती है। उनमें से कुछ चर्च के काम में उत्साह प्रदर्शित करती हैं पर अधिकांश चर्च नारियाँ दुराग्रही होती हैं । वहाँ वे पादरियों के कठोर

54. द *कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द*, भाग-दो, (कोलकाता, 2005), पृ० 506
55. *विवेकानन्द साहित्य*, भाग-चार, (कोलकाता, 1989), पृ० 250-51



शासन में रहती हैं । वे और पादरी मिलकर पृथ्वी को नरक बनाते हैं और धर्म की मिट्टी पलीद करते हैं।'

स्वामी विवेकानन्द को आश्चर्य था कि यूरोप के स्वतंत्र राष्ट्रों में नारी के सन्दर्भ में, पराधीन भारत में उनकी अवस्था इतनी खराब नहीं है । उदाहरण के लिए, वे आश्चर्यचकित थे कि ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रेज, हार्वर्ड तथा येल विश्वविद्यालयों के द्वार स्त्रियों के लिए तब तक बन्द थे, जबकि भारत में उससे बीस वर्ष पूर्व (1857 में) कलकत्ता विश्वविद्यालय में स्त्रियों के लिए खोल दिए गये थे।[56] उन्होंने अमेरिका में महिलाओं के विवाह से पूर्व कौमार्य जीवन को त्रस्त पाया तथा अत्यधिक विवाह-विच्छेद को अनेक दोषों से युक्त कर उन्हें लगा कि पराधीनता में भी भारत कभी भी अपनी सामाजिक नैतिकता से वंचित न था । भारत चरित्र एवं इतिहास में अपनी प्राचीन विरासत को न भूला था ।

एक आँकड़े से ज्ञात होता है कि इंग्लैण्ड तथा अमेरिका के कष्टों के दिनों में भी वे स्त्रियों के प्रति दुर्व्यवहार तथा दुरुपयोग को न भूले । प्रथम महायुद्ध (1914-1918) के मध्य लन्दन के केवल एक मोहल्ले (पिकाडली) में 80,000 से अधिक बाज़ारू औरतें थी। कैम्ब्रिज तथा ऑक्फोर्ड तथा अन्य शिक्षा-केन्द्रों में प्रथम महायुद्ध के पश्चात् 10 से 14 प्रतिशत अवैध सन्तानों की संख्या बढ़ गई थी।[57] नोबल पुरस्कार विजेता नीरद चौधरी ने 1980 ई० में एक लेख[58] में बताया कि इंग्लैण्ड में किस प्रकार से पितृहीन परिवार का विचार प्रतिष्ठित हो रहा है। विचार स्पष्ट है कि विवाह संस्था की समाप्ति और किसी भी पुरुष-स्त्री द्वारा गर्भधारण कर संतान पैदा करने को मानना । इससे यह ज्ञात होता है कि वर्तमान यूरोप किस दिशा में आगे बढ़ रहा है, क्या हमें इसे यूरोपीय सभ्यता के ऐतिहासिक विकास का प्रतिफल कहेंगे या विघटन की विषवेल ।

यूरोप की भाँति वर्तमान अमेरिका भी इस तथाकथित सभ्यता के

56. सतीशचन्द्र मित्तल, 'स्वामी विवेकानन्द तथा नारी सम्मान', *पाञ्चजन्य*, 6 मई 2010
57. डॉ० पी०आर० साहनी, भारतीय संस्कृति का इतिहास (बरेली, 1974 पृ० 19
58. देखें, द टाइम्स ऑफ इंडिया, 8 जून 1980

विकास में पीछे नहीं है । अमेरिका की पारिवारिक रचना[59] में सर्वाधिक मूल्यवान् वस्तु है सिर्फ पैसा, पैसा और पैसा या सेक्स और सेक्स । अमेरिका में तेजी से अविवाहित माताओं की संख्या भी बढ़ रही है । बिना पूरे परिचय के बच्चों की पहचान कठिन है कि किस बच्चे का पिता या माता कौन है । सामान्यत: एक से अधिक बार विवाह का प्रचलन है । विवाह एक क्षणिक समझौता हो गया है । अमेरिका में तलाक को बहुत प्रोत्साहन मिला है । एक सरकारी रिपोर्ट[60] के अनुसार 1900 ई० में तलाक की दर 0.3 प्रतिशत थी जो 21वीं शती के प्रारम्भ में बढकर 8.2 प्रतिशत से भी अधिक हो गई है । इसी भाँति अविवाहित महिलाओं की संख्या, जो पहले 0.5 प्रतिशत थी, बढ़कर 10.3 प्रतिशत से भी अधिक हो गई हैं। विधुरों की संख्या 14 प्रतिशत तथा विधवाओं की संख्या 16 प्रतिशत हो गई है।[61]

अमेरिका में कामकाजी महिलाओं की संख्या तेजी से बढ़ी है तथा महिलाओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक तथा आन्तरिक असुरक्षा की भावना भी बढ़ी है । अमेरिका की सरकार ने अब समूचे देश में प्रत्येक नागरिक को शस्त्र रखने की इज़ाज़त दे दी है ।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता स्वच्छन्दता तथा उदण्डता का स्वरूप ले रही है । एक नारी-संगठन ने पुरुषों के समान अधिकार जताते हुए, पुरुषों की भाँति महिलाओं के भी 'टॉपलैस' होने की मांग की है। छोटे-छोटे शिशुओं को मामूली डाँट-फटकार पर पुलिस बुलाने या अपने माता-पिता या अभिभावक को दण्डित करने का प्रावधान है । वहाँ प्रारम्भिक शिक्षा माता-पिता की ज़िम्मेदारी है पर उच्च शिक्षा का व्यय स्वयं बालक को उठाना पड़ता है तथा उसकी व्यवस्था स्वयं करनी होती है। मांग की जा रही है कि क्या छात्र भी स्कर्ट पहनकर आ सकते हैं । अमेरिका में 'सेक्सुअल ओरियंटेशन' की व्यवस्था है । उत्तरी केरोलिना विश्वविद्यालय से संबंधित एक मातृत्व नर्स इस बात से बहुत चिन्तित है कि छोटी

59. विस्तार के लिए देखें, सतीशचन्द्र मित्तल, अमेरिका का पारिवारिक सच, पाञ्जन्य 12 सितम्बर 2010
60. रिर्पोट - यू एस काउंसिल ऑफ इकोनोमिक एडवाईजर्स, 2010
61. पापुलेशन एण्ड डेवलपमेन्ट रिव्यू (न्यूयार्क, सितम्बर 2006) पृ० 616-618



आयु की बालिकाओं में सन्तान पैदा करने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ रही है। हेजेल ब्राउन नाम की इस महिला ने एक संस्था बनाकर 12 से 18 वर्ष की आयु की छात्राओं को गर्भ धारण रोकने के लिए तरह-तरह के प्रलोभन दिए हैं ।

विश्व प्रसिद्ध पत्रकार मार्क टुली का कथन गम्भीर है, 'मुझे ख़तरा महसूस हो रहा है कि कहीं भारत नकली अमेरिका बनने के रास्ते पर न चल पड़े।'

## महिला पुनरुत्थान और सुधार-आन्दोलन :

उन्नीसवीं शताब्दी तथा 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जब पाश्चात्य जगत् तथा अमेरिका पूरी तरह से अर्थ और काम में डूबा हुआ था; जब तक मुसलमानों की मज़हबी कट्टरता तथा जुनून और साथ ही ईसाइयत की आँधी भारत में चल रही थी, तब भारत के समाज-चिन्तकों तथा सुधारकों ने सामाजिक कुरीतियों तथा महिला की दयनीय दशा को सुधारने के लिए, अपने धर्मग्रन्थों तथा अतीत की व्यापक सांस्कृतिक चेतना में टटोला तथा देश में समाजसुधार की एक सुनामी आयी । महिलाओं की दशा सुधारने के लिए विभिन्न समाज, संस्थाएँ तथा महापुरुष आगे आये । इनमे सर्वप्रथम नाम राजा राममोहन राय (1772-1833) तथा उनके द्वारा स्थापित ब्रह्मसमाज का पहला प्रमुख नाम आता है । उनकी जीवनीकार कोलेट ने उन्हें इतिहास में एक जीवित सेतु माना जिन्होंने अपरिमित अतीत से अपरिमित भविष्य का मार्ग प्रशस्त किया ।[62] उन्होंने उपनिषदों को आधार मानकर 1815 ई० में आत्मीय सभा[63], 1821 ई० में यूनीटेरियन सोसायटी तथा 20 अगस्त, 1828 ई० को कलकत्ता में ब्रह्मसमाज की स्थापना की । उन्होंने सामाजिक सुधार तथा विशेषत: महिला-सुधारों की ओर ध्यान दिया । सन् 1811 में जब उनके बड़े भाई जगमोहन की मृत्यु हुई तथा उसकी पत्नी अलकमंजरी को जबरदस्ती सती कराया गया, तभी से उन्होंने सती-प्रथा के विरुद्ध अपना अभियान प्रारम्भ किया था । ऐसा कहा जाता है कि जब किसी भी शव-यात्रा में वे जाते, तो

62. *सोफिया डोब्सन कोलेट द लाइफ एण्ड लैटर्स ऑफ राममोहन राय (सम्मादित, डी०के०विश्वास एवं पी०सी०गांगुली, 1962), पृ० 378*
63. शिवनाथ शास्त्री, *हिस्ट्री द ब्रह्म समाज*, भाग-एक, पृ० 378

जब लोग 'राम नाम सत्य है' बोलते, तो वह 'सतीप्रथा बंद हो' का उच्चारण करते थे। उनके प्रयत्नों से लॉर्ड विलियम बैंटिक द्वारा 4 दिसम्बर 1829 (नियम 17) सर्वसम्मति से पारित हुआ था। यही क़ानून 1830 में बम्बई तथा मद्रास में लागू हुआ। इसके अलावा पर्दा-प्रथा, बाल विवाह, बहुविवाह, बाल हत्या का उन्होंने कटु विरोध किया। उन्होंने विधवा-विवाह के लिए समाचार-पत्रों, लेखों, प्रस्तावों द्वारा प्रयास किये। वस्तुतः उनके विचार आगामी ब्रह्मसमाज का सामाजिक एजेण्डा बन गया।

ब्रह्मसमाज के प्रभाव से ईश्वरचन्द विद्यासागर तथा अक्षय कुमार दत्त-जैसे विचारक ब्रह्मसमाज में आये। विधवा-विवाह के लिए दो महान् सुधारकों ने भगीरथ प्रयास किये। विधवा-विवाह के लिए यद्यपि प्रयत्न 1756 ई० से चल रहे थे, तथापि इसमें सर्वाधिक योगदान पं० ईश्वरचन्द विद्यासागर (1820-1891) का था। उन्होंने विधवा-विवाह पर दो पुस्तकें प्रकाशित की थीं। इस सन्दर्भ में कई स्मृति-पत्र (Petitions) भी प्रस्तुत किये थे। आख़िर जुलाई 1856 में विधवा-पुनर्विवाह बिल प्रस्तुत किया गया तथा जिसे शीघ्र क़ानून बना दिया गया था। कुछ महिलाओं ने भी इसका विरोध किया था। उन्होंने कहा, 'हम एक बार पैदा होती हैं, हम एक बार मरती हैं तथा हमारी विवाह भी एक ही बार होता है।' बिल के अंतर्गत पहला विधवा-विवाह 07 दिसम्बर, 1856 को हुआ था। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने अपने एकमात्र पुत्र नारायण चन्द्र का भी विवाह भावसुन्दरी नामक महिला से कराया था। विधवा विवाह का यही प्रयत्न मुम्बई में विष्णु शास्त्री ने किया था। अन्य संस्थाओं द्वारा भी इसके लिए प्रयास हुए थे। महिला-सुधार की दृष्टि से भी केशव चन्द्र सेन (1836-1884) ने भी अनेक प्रयत्न किये। उन्होंने बालविवाह, विधवा-पुनर्विवाह, अंतर्जातीय विवाह कराने तथा बहुविवाह को रोकने में भारी सफलता प्राप्त की थी।[64] बाद में विवाह की आयु 1930 ई० में हरविलास शारदा के प्रयत्नों से लड़के की 18 साल तथा लड़की की 14 वर्ष कर दी गई थी।

64. के०के०दत्त, पूर्वोद्धृत, पृ० 356-366
65. सतीशचन्द्र मित्तल, *भारत का स्वाधीनता संग्राम* (1858-1947), नई दिल्ली, 2012, पृ० 51



बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय (1838-1894) ने अपने राष्ट्रीय पत्र *बंगदर्शन* तथा अपने चौदह प्रसिद्ध उपन्यासों द्वारा नारी-यातनाओं तथा नारी-संघर्षों का वर्णन किया।[65] महादेव गोविन्द रानडे का प्रार्थना समाज इन्हीं सामाजिक सुधारों की भावना से प्रेरित था।

स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824-1883) को भारत में सांस्कृतिक जागरण का प्रथम सन्देशवाहक माना जाता है। जहाँ ब्रह्मसमाज ने भारत की जड़ों को उपनिषदों में ढूँढ़ा, वहाँ आर्य समाज ने उसे वेदों में पाया।[66] आर्य समाज हिंदुओं में सुधार के लिए एक शक्तिशाली शक्ति के रूप में उभरकर आया।[67] आर्य समाज ने बाल-विवाह का कटु विरोध किया तथा 1891 ई० विवाह की आयु बढ़ाने के संदर्भ में 'कन्सेंट बिल' का समर्थन किया। विधवा-विवाह का समर्थन किया। विवाह तथा अन्य अवसरों पर कम खर्च करने का सन्देश दिया। महिलाओं में पर्दे की प्रथा, कन्या-हत्या को शास्त्रविरोधी बताया। आर्य समाज पहली संस्था थी जिसने विधवाओं के लिए गृह बनवाये। आर्य समाज का प्रमुख योगदान शिक्षा के क्षेत्र में है। इसमें स्वामी दयानन्द के योग्य अनुयायियों– लाला हंसराज, पं० गुरुदत्त, लाला लाजपत राय तथा स्वामी श्रद्धानन्द का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। आर्य समाज के द्वारा अनेक कन्या-पाठशालाएँ खोली गयीं। इसमें उल्लेखनीय जालन्धर में 1890 में कन्या महाविद्यालय की स्थापना थी। पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर माइकेल ओ'ड्वायर ने 1916 ई० में कन्या महाविद्यालय की 'विजिटर बुक' में लिखा था, 'जालन्धर एक ऐतिहासिक स्थल है, लेकिन कन्या महाविद्यालय ने इसे सम्पूर्ण भारत में विख्यात बना दिया है।'[68]

भारत में महिला की दशा तथा शिक्षा के विकास में 1882 ई० में मद्रास के अड्यार में स्थापित थियोसोफिकल सोसायटी का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। श्रीमती ऐनी बेसेन्ट (1847 1933) ने महिला शिक्षा के विकास में महत्ती कार्य किया। महिलाओं की शिक्षा की ओर उनका विशेष ध्यान था। उन्होंने कहा था[69]

66. रामधारी सिंह दिनकर, *संस्कृति के चार अध्याय* (पटन, 1972)
67. ए युसुफअली, द *मेकिंग ऑफ इंडिया*, (लन्दन, 1925), पृ० 285
68. ज्ञानवती दरबार, *भारतीय नेताओं की हिन्दी सेना* (नई दिल्ली, 1961), पृ० 102
69. एनी बेसेण्ट, *इसैनशैल्स ऑफ एन इण्डियन एजुकेशन* (अदयार)

"भारत संसार के देशों में तब तक अपना स्थान नहीं पा सकता जब तक इस देश की माताएँ, जिनके घुटनों पर उनके बच्चे बड़े होते हैं, शिक्षा प्राप्त नहीं कर लेती। जब तक इन स्त्रियों को शिक्षा नहीं मिलती जिसके आधार पर वे घर को सुन्दर बना सकें, तब तक कोई कैसे आशा कर सकता है कि भारत उन्नति करेगा ?"

उन्होंने कन्याओं की शिक्षा में धर्म की शिक्षा, प्राचीन साहित्य के ज्ञान को महत्त्व दिया। वह चाहती थीं कि भारतीय कन्याओं की शिक्षा में भारत की वीर महिलाओं का चित्रण हो। उनके नेतृत्व में अनेक स्थानों- बनारस, कानपुर, श्रीनगर, गोरखपुर, अड्यार आदि स्थानों पर स्कूल तथा कॉलेज़ स्थापित हुए। उन्होंने एक अन्य स्थान पर कहा था कि तुम अशिक्षित माताओं द्वारा देशभक्तों तथा वीरों की जाति नही बना सकते। ये भारत की माताएँ ही थीं जिन्होंने भारत के अतीत को बनाया।[70] उन्होंने बालविवाह, कन्या-विक्रय का विरोध किया तथा विधवा-विवाह को महत्त्व दिया। ऐनी बेसेन्ट को विश्वास था कि 'भावी शिक्षित लोगों की एक पीढ़ी भारत का नक्शा बदल देगी।'[71]

स्वामी विवेकानन्द ने 01 मई, 1897 ई० को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उन्होंने महिलाओं की दशा सुधारने पर बहुत बल दिया। उन्होंने राष्ट्र की उन्नति के लिए धर्म तथा आध्यात्मिकता के पश्चात् दूसरा स्थान महिलाओं की दशा सुधारने की ओर बतलाया। उनका चिन्तन था कि 'आर्यों और सेमेटिक लोगों में नारी-संबंधी आदर्श सदैव एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं।' वे महिलाओं की दशा सुधारने के लिए सर्वोत्तम मार्ग उनको शिक्षित करना मानते थे। वस्तुतः भारत में महिला के शिक्षा के विकास में स्वामी विवेकानन्द का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वामी विवेकानन्द ने मार्गरेट एलिथाबेथ नोबुल (1867-1911), जो भारतीय इतिहास में स्वामी विवेकानन्द की आध्यात्मिक पुत्री अथवा सिस्टर निवेदिता के नाम से प्रसिद्ध हैं, के भारत-आगमन से पूर्व एक पत्र में उसको लिखा था, 'अपने देश में नारी-उत्थान की मेरी निश्चित योजना है। मैं राष्ट्रीय स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के लिए एक संस्था चलाना चाहता हूँ

70. एनी बेसेण्ट, बर्थ ऑफ ए न्यू नेशन (अदयार, 1917), पृ० 102
71. शम्भुशरण दीक्षित, राष्ट्रीयत्व तथा भारतीय शिक्षण (जालन्धर), पृ० 55



जिससे न केवल भारतीय पत्नियों व माताओं का, अपितु ऐसी ब्रह्मचारिणों का भी निर्माण हो जो अपनी जाति का उत्थान करें। ऐसी महिलाओं की आवश्यकता है जो यह संभाल लें।'[72] एक दूसरे पत्र में लिखा, 'हमें पुरुष नहीं, तुम जैसी एक महिला चाहिए जो भारतीयों, विशेषकर महिलाओं को को शिक्षित करें। भारत को आज एक शेरनी की ज़रूरत है।[73] निःसंदेह सिस्टर निवेदिता ने भारत की नारी शिक्षा के साथ विविध क्षेत्रों में यशस्वी योगदान दिया। भारत आते ही उन्होंनें कलकत्ता में 13 नवम्बर, 1898 को एक छोटा-सा विद्यालय शुरू किया जो आज भारत की महिलाओं की शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय है। एक बार महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर से निवेदिता ने कहा था, "विदेशी शिक्षा के कारण अपनी राष्ट्रगत विशेषताएँ समाप्त हो जाती हैं।"[74] निवेदिता मातृभाषा में शिक्षा देने की पोषक थीं। उनका कहना था कि जिस प्रकार माँ के दूध पर पलनेवाला बालक अधिक स्वस्थ और बलवान् होता है, उसी प्रकार मातृभाषा में पढ़ने से मन और मस्तिष्क अधिक दृढ़ होते हैं।[75] सिस्टर निवेदिता ने अपनी पुस्तकों में भारतीय माँ तथा पत्नी की भूमिका का वर्णन किया तथा उसे राष्ट्रीय संस्कृति तथा परम्पराओं का पोषक तथा रक्षक बताया।[76] उन्होंने अपनी पहली रचना *काली द मदर* में काली माँ के विश्व की सर्वोच्च देवी और जगद्धात्री कहा।[77] महिलाओं की शिक्षा के साथ सिस्टर निवेदिता ने भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन में, वह देश के अनेक राष्ट्रभक्तों की प्रेरिका थीं, जिस कारण ब्रिटिश सरकार उनके प्रति सशंकित तथा क्रोधित थी। उनके कार्यों को राजविरोधी समझा गया। उनको 'गुप्तचर' तथा 'देशद्रोही' भी समझा गया।[78] इसी भाँति एनी बेसेन्ट को भी 'विक्टोरियन-युग की

72. डॉ० सतीशचन्द्र मित्तल, *हिंदुत्व से प्रेरित विदेशी महिलाएँ* (नयी दिल्ली, 2014) पृ० 6
73. *वही*, पृ० 6
74. वही, पृ० 22
75. वही, पृ० 22
76. सिस्टर निवेदिता, द *वेब ऑफ इंडियन लाईफ* (1904), सिस्टर निवेदिता का सम्पूर्ण वाङ्मय द *कक्टैड वर्क्स ऑफ सिस्टर निवेदिता* के नाम से पाँच भागों में कलकत्ता से 1967 में प्रकाशित हुआ।
77. सिस्टर निवेदिता, *काली द मदर* (1904)
78. मार्गरेट बैकमिलन, वीमेन ऑफ द राज (न्यूयार्क, 1988), पृ०, 218-19

एक विद्रोही तथा संघर्षरत सन्तान' कहा गया था।[79]

श्रीमति मिर्रा अल्फासा रिचर्ड (1878-1973) का नाम भारत के आध्यात्मिक जगत् तथा महिला-शिक्षा में महत्त्वपूर्ण है। ये 1920 ई० में स्थायी रूप से पाण्डिचेरी आ गई थीं। महर्षि अरविन्द ने ही इन्हें 'श्रीमाँ' का नाम दिया था। उन्होंने श्रीअरविन्दाश्रम को केवल एक सुन्दर स्वरूप नहीं दिया बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में अद्वितीय प्रयोग किये। प्रसिद्ध वेदवेत्ता पं० श्रीपाद दामोदर सातवळेकर (1867-1968) ने वहाँ की शिक्षा-व्यवस्था तथा लड़के-लड़कियों के विकास के विभिन्न उपक्रम देखकर कहा था कि यह महत्त्वपूर्ण वैदिक समाज का चित्र है। आदर्श वैदिक समाज में किसी का ध्यान इस बात पर नहीं टिकेगा कि कौन व्यक्ति पुरुष या नारी, वही आत्मा-आत्मा का मिलन होगा और पुरुष-नारी की चेतना का भेद पीछे छूट जाऐगा। श्रीमाँ ने सर्वाधिक ध्यान बालशिक्षा की ओर दिया। उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में माता की भूमिका पर विशेष बल दिया। उन्होंने महिला की मातृत्व की भूमिका का प्रमुखता दी। उन्होंने कहा कि वह वर्तमान परिस्थितियों को बदलने की क्षमता रखनेवाली आध्यात्मिक शक्तियों को अभिव्यक्त करें।[80] उन्होंने नारी का सच्चा क्षेत्र आध्यात्मिक बतलाया।[81] बालकों की उत्तम शिक्षा के लिए स्वयं माता-पिता को स्वयं शिक्षित, सजग होना बतलाया।[82]

इसके साथ ही भारत के विविध सम्प्रदायों तथा भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में नारी-सुधार तथा विकास के लिए अनेक प्रयत्न हुए। उदाहरणत: 1873 ई० में सत्यशोधक समाज के संस्थापक श्री ज्योतिराव गोविन्दराव फुळे (1827-1890) ने कन्याओं के लिए एक विद्यालय खोला तथा विधवा-विवाह के लिए प्रयत्न किये।

सर सैयद अहमद ख़ाँ (1817-1898) ने भारतीय मुस्लिम महिलाओं

79. पालिटिकल आईडियोलॉजी, (उद्धरित, जयप्रकाश मिश्र (सम्पादित), *रिसर्चेज इन सोशल साइंसेज* (नयी दिल्ली, 1993), पृ० 273
80. श्री माँ, *आदर्श माता-पिता, अध्यापक और बालक*, पृ० 11-12
81. *वही*, पृ० 8-9
82. *वही*, पृ० 14-15



के जीवन सुधारने के लिए बहुविवाह-प्रथा का विरोध किया तथा सरलता से तलाक का भी समर्थन नहीं किया। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने अपनी पत्रिका *तहज़ीब-उल-अख़्लाक* द्वारा महिलाओं के नैतिक स्तर उच्च करने तथा पर्दे की प्रथा का विरोध किया। 1873 ई० में अमृतसर में स्थापित 'सिंह सभा' द्वारा 'आनन्द विवाह' को क़ानूनी मान्यता दिलाने के लिए प्रस्ताव पारित किये गये तथा महिलाओं के लिए संस्थाएँ खोली गईं।[83] 1886 ई० में पं० दीनदयालु द्वारा स्थापित सनातन धर्मसभा ने विवाह के अवसर पर नर्तकियों को नचाने, फिजूल खर्च करने की कटु आलोचना की तथा विधवाओं के पुनर्विवाह पर बल दिया।

उन्नीसवीं तथा 20वीं शताब्दी में भारत की महिलाओं ने विभिन्न क्षेत्रों में विकास में बढ़-चढ़कर योगदान किया। इस काल में कई रानियाँ भी ऐसी हुईं जिन्होंने अपने शासनकाल में महिलाओं को विशिष्ट स्थान प्रदान किया। जैसे त्रावणकोर की गौरी पार्वती, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई (1835-1857 ई०) तथा महारानी मैसूर। तरुणदत्त जैसी श्रेष्ठ बांग्ला लेखिका हुईं। पंडिता रमाबाई रानडे ने सामाजिक सुधार के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किये। मादाम भीखाजी रुस्तमजी कामा, कल्पना दत्त, प्रीतिलता वड्डेयार, दुर्गादेवी वोहरा (दुर्गा भाभी), रानी गाईदिन्ल्यु क्रान्तिकारी महिलाएँ हुईं।

अत: संक्षिप्त में यह कहा जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक-धार्मिक आन्दोलनों तथा सुधारों द्वारा महिला की दशा में सुधारने के लिए कुछ प्रभावी कदम अवश्य उठाये गये पर अभी सुधारों की पर्याप्त आवश्यकता थी।

## भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात् नारी

सन् 1947 में अंग्रेज़ों के भारत से जाने तथा पाकिस्तान में वहाँ के नारी समाज को प्रचलित बहुपत्नी-प्रथा से अपने सम्मान की रक्षा के लिए प्रारम्भ से ही संघर्ष करना पड़ा[84] उन्हें बड़ी कठिनाई से 1961 के नियम द्वारा कुछ क़ानूनी राहत

83. द *ट्रिब्यून*, 9 अप्रैल 1909
84. साना ख़ाँ, 'वीमैन तथा स्टेट लॉज एण्ड पालिसीज़ इन पाकिस्तान : द अर्ली फेज़ (1947-1977)', भारतीय इतिहास काँग्रेस की कार्यवाही 74वाँ अधिवेशन, कर्नाटक, 2013 (प्रकाशित दिल्ली, 2014), पृ० 726-733

मिली,[85] वहाँ भारत में शीघ्र ही क़ानूनी रूप से अनेक तथा नवीन क़ानूनों को मान्यता मिली।

कुछ प्रमुख क़ानून इस प्रकार हैं, जैसे– हिंदू विवाह क़ानून (Hindu Marriage Act 1953), विशेष विवाह अधिनियम 1954 (special marriage Act 1954), हिंदू विवाह तथा विवाह-विच्छेद अधिनियम 1955 (The Hindu Marriage and Divorce Act 1955), हिंदू उत्तराधिकारी अधिनियम 1956 (The Hindus succession Act 1956), हिंदू नाबालिग तथा संरक्षण-क़ानून 1978 (The Hindu Adoptions and Maintenance Act 1978) आदि। इसके साथ ही दहेज-निरोधक अधिनियम 1961 तथा हिंदू विवाहित स्त्रियों के पृथक् निवास तथा भरण क़ानून 1946 से बने। 1971 के अधिनियम द्वारा गर्भपात को क़ानूनी मान्यता मिली। मुसलमानों में बहुपत्नी-प्रथा को ग़ैरकानूनी घोषित किया गया, पर यह क़ानून मुसलमानों में लागू न हुआ।

इसके अलावा महिला में शिक्षा का विस्तार, संविधान के अनुसार वोट डालने तथा चुनाव में खड़े होने का अधिकार मिला। कन्या के विवाह की आयु न्यूनतम से बढ़ाकर 18 वर्ष कर दी गई (01 फरवरी 1978), पर्दा अतीत की बात हो गयी। सती-प्रथा समाप्त हो गई। अनमेल विवाह प्रायः समाप्त हो गये। अंतर्जातीय विवाह तथा विधवा-विवाह तेजी से पुनः होने लगे। अब महिलाएँ उच्चतम शिक्षा ही नहीं, उच्चतम सरकारी नौकरी के लिए चुनी जाने लगीं तथा प्रतियोगिता में आगे आयीं। अनेक सुधार हुए। संक्षेप में भारतीय हिंदू नारी के जीवन में मध्यकालीन तथा ब्रिटिश राज्य में उत्पन्न अनेक विषमताएँ समाप्त हुईं तथा भारतीय समाज में नारी का सम्मान माँ, पत्नी, बहिन तथा पुत्री के रूप में बढ़ा। पति का गुरु तथा देवता का स्वरूप समाप्त हुआ तथा पुरुष तथा स्त्री में पुनः सखाभाव आया तथा बढ़ा।

## नयी चुनौतियाँ :

विचारणीय गम्भीर प्रश्न है कि क्या भारत की नारी को सुख, समृद्धि की प्राप्ति हो गयी ? क्या नारी के औचित्यपूर्ण मापदण्ड तक वह पहुँच गयी ? क्या उसको

85. *वही*, पृ० 728



सम्मान, समानता तथा अधिकार प्राप्त हो गये? क्या नारी स्वतंत्र तथा नारी शक्तिकरण की मांग कम हो गयी ? नारी और पुरुष के परस्पर संबंधों में सन्तुलन, सामञ्जस्य तथा सहयोग स्थापित हो गया ? क्या नारी के प्रति अत्याचार तथा दुर्व्यवहार कम हो गये ? क्या विवाह-संबंधी प्रश्न हल हो गये ? आदि अनेक उभरते प्रश्न आज भी हैं।

आधुनिक नारीवादियों (Modern feminist) का तो आरोप है[86] कि नारी-समस्या पर इतिहास में कभी उचित ध्यान नहीं दिया गया। अतः इस पर व्यवस्थित रूप से पुनः अध्ययन की नितांत आवश्यकता है।

यह सत्य है कि भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात् देश में भारतीय जीवन-मूल्यों के प्रति उदात्त, भावना, श्रद्धा, उच्च मानसिकता की बजाय पाश्चात्यकरण को तीव्र गति से बढ़ावा मिला है। स्वतंत्रता, श्रद्धा के उच्च मानसिकता की बजाय पाश्चात्यकरण को तीव गति से बढ़ावा मिला है। स्वतंत्रता, समानता के अधिकारों की मांग के साथ स्वच्छंदता तथा उदण्डता भी पनप रही है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सम्मुख सामूहिकता या राष्ट्रहित को गौण किया जा रहा है। पारिवारिक चिन्तन की बजाय व्यक्तिगत सुखों को महत्त्व दिया जा रहा है। विवाह एक संस्कार न रहकर बाज़ारू क्रय-विक्रय की वस्तु बनता जा रहा है।

कुछ पाश्चात्यकरण के अनुगामी तथा आधुनिक नारीवादी यह मानते हैं कि महिलाओं द्वारा गृहकार्य अनुत्पादक, कठिन तथा दुष्कर है, जिससे नारी के व्यक्तित्व के विकास में बाधा आती है। एक आँकड़े के अनुसार भारत की 53 प्रतिशत वयस्क महिलाओं, जिनकी औसतन आयु 50 वर्ष है, के जीवन के आठ वर्ष रसोई में ही बीत जाते हैं।[87] वे रसोई को स्वास्थ्य की स्थली तथा स्वस्थ ओषधियों की प्रयोगशाला नहीं मानतीं। उनमे से कुछ को तो आश्चर्य है कि अब

86. के०एम०शीलिया, *'इन्ट्रोगेटिंग डिसिप्लनरी बाउन्डरीज़ : फैमिनिस्ट अल्टरनैटिब्ज एण्ड राइटिंग्स वूमैन्स हिस्टरीज'* भारत इतिहास की कार्यवाही 74वां अधिवेशन, (कर्नाटक 2013 प्रकाशित, दिल्ली 2014), पृ० 483-89

87. एम०आर०गोयल, 'डिफरेन्टीशेयेट मैन-वूमैन सोशलाईजेशन इन इंडिया', *इतिहास दर्पण*, अंक 13/2, 2008, पृ० 127-131

भी भारतीय परिवारों में अपनी बेटियों को गृहकार्य में दक्ष करने की शिक्षा दी जा रही है । अत: कुछ पढ़ी-लिखी महिलाओं ने अपना विद्रोही स्वर[88] मुखरित किया है । सम्भवत: वे अज्ञानवश यह भूल जाती हैं कि हज़ारों वर्षों के अनुभव ने उसे घर का स्वामी माना है अथवा उसे दम्पत्ति अर्थात् घर का संयुक्त स्वामी कहा है । आधुनिक नारीवादी न ही महिलाओं के गृहकार्य को उचित मानते हैं और महिलाओं के निजी व्यक्तिगत जीवन में लिंगभेद के आधार पर पूर्ण समानता की मांग करते दिखते हैं ।

दूसरे भारतीय जनजीवन में परम्परागत रूप से परिवार को संस्कार की प्रभावी स्थली माना गया है । नारी शक्तिकरण के अनेक उपासक इसे महिला के विकास में बाधा मानते हैं । संयुक्त परिवार ही नहीं एकल परिवारों में भी दरारें पड़ती दिखलाई देती हैं । वे इसे नारी-स्वतंत्रता तथा समानता में बाधा मानते हैं । इसके विपरीत यूरोप तथा अमेरिका में कुछ कटु अनुभवों तथा समाज-व्यवस्था को देखते हुए परिवार-व्यवस्था को जीवन के विकास में सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी माना जा रहा है । उदाहरण के लिए इंग्लैण्ड की पूर्व प्रधानमंत्री मार्गरेट थेचर इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री पद से मुक्त होने पर, एक सप्ताह एक भारतीय परिवार में रहीं । उन्हें बड़ा अच्छा लगा । उन्होंने कहा कि आनेवाले समय में इंग्लैण्ड के समाज को यदि बचाना हो तो जितना जल्द हो भारतीय मूल्यों को ग्रहण करने का प्रयत्न करना चाहिये ।[89] फ्रांस के राजदूत ने कठोर परिस्थिति में भारत के जीवित रहने का मुख्य कारण मज़बूत पारिवारिक व्यवस्था बतलाया है । अमेरिका के अनेक स्त्री-पुरुष वहाँ बसे भारतीयों के पारिवारिक जीवन के स्थायीत्व और उनके बच्चों में उपजे संस्कारों को देखकर आज आश्चर्यचकित हैं । भारतीय चिन्तन में जहाँ परिवार निरन्तरता तथा स्थायीत्व का आधार हैं, जो विदेशों में प्राय: नहीं है ।

पाश्चात्य प्रभाव से भारत में भी जहाँ विवाह-विच्छेद की मात्रा तेजी से बढ़ी है, वहाँ विवाह स्वयं में पश्चिम की देखा-देखी एक व्यक्तिगत इच्छा का

88. *वही*, पृ० 128

89. प्रो० हरवंशलाल ओबराय व स्वामी सुबोधगिरी, पूर्वोद्धृत, पृ० 9



भाग बनता जा रहा है । भारतीय जीवन में जहाँ विवाह को एक पवित्र संस्कार माना गया है, वहाँ सेमेटिक सम्प्रदायों में यह अब इकरारनामा भी नाममात्र रह गया है । भारत में भी नारी के प्रति दुराचरण तथा नैतिक पतन का भी प्रमुख कारण विवाह-संबंधी उनका अपहरण है । नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो के निकटतम 2014 ई० के आँकड़ों के अनुसार भारत में 40 प्रतिशत नारी-अपहरण, विवाह के कारण हो रहे हैं तथा इसमें उत्तरप्रदेश, बिहार तथा असम आगे है ।[90]

विगत कुछ वर्षों में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा भारत के विभिन्न महाविद्यालयों में नारी-शक्तिकरण की योजनापूर्वक राष्ट्रीय गोष्ठियाँ की गयीं । नारी-शक्तिकरण का अर्थ प्राय: गोष्ठियों में नारी के आर्थिक अधिकारों तथा पुरुषों के प्रति पूर्णत: समानता तथा उसे एक प्रतिद्वन्द्वी के रूप में खड़ा करने का प्रयास किया गया जो सर्वथा तर्कसंगत तथा ऐतिहासिक आधार पर खरा नहीं उतरता । कुछ क्षेत्रों में नारी शक्तिकरण के नाम पर आर्थिक अधिकारों की दौड़ में उन स्थानों पर भी नारी को उकसाया जा रहा है जहाँ वे जीवविद्या, शारीरिक बनावट तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं हैं । प्रकृति ने पुरुष-स्त्री में भेद बनाया है जो शाश्वत है। भारतीय चिन्तन में पुरुष तथा स्त्री के विवाहोपरांत एक आत्मा माना है, परन्तु पूर्णत: समान नहीं है। कुछ अन्तरों से ही दोनों में एकत्व का दर्शन होता है । जीवविद्या के शास्त्रियों का कहना है कि माँ बच्चे को जन्म देती है, अपना दूध पिलाती है, बच्चों का भरण-पोषण करती है जबकि पुरुष आजीविका के साधन जुटाता है । माँ का कार्य कोई अन्य नहीं कर सकता । शारीरिक बनावट की दृष्टि से दोनों में बड़ा अन्तर है। पुरुष स्वभाव से कठोर, शक्तिशाली, सभी प्रकार की बाहरी व्यवस्था में रह सकता है । स्त्री स्वभाव से कोमल, मधुरभाषी तथा घर में सुरक्षित होती है । प्रश्न एक दूसरे से उच्च (Superior) होने का नहीं बल्कि शारीरिक तथा मानसिक बनावट का है । सर्वपल्ली राधाकृष्ण ने लिखा, 'महिलाएँ वह कुछ नहीं कर सकतीं जो पुरुष कर सकता है, ये करने के लिए उनकी शारीरिक रचना इससे रोकती है । इससे यह साबित नहीं होता कि वे निम्न (inferior) हैं । हमें वही कार्य करना चाहिए

90. द *टाइम्स ऑफ इण्डिया*, 20 अगस्त, 2015

जिसके लिए हम बने हैं और उसे अच्छे ढंग से करें ।[91] इसी भाँति मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी प्रकृति ने दोनों में अन्तर बनाया है । महिलाओं को पुरुष की अपेक्षा अधिक भावुक तथा कम तार्किक माना गया है । महिला पुरुषों की अपेक्षा आज्ञापालन, परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढालना, क्षमता की गुणों से युक्त तथा समर्पित होती हैं । इसमें कुछ अपवाद हो सकते हैं । भारतीय नीतिकारों ने दोनों के गुणों की विशिष्टताओं की सन्तुलित प्रशंसा की है । अत: नारी शक्तिकरण की मांग में उसके आर्थिक क्षेत्र में प्रत्येक परोक्ष तथा प्रतियोगिता की दौड़ में वह शारीरिक, मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं है । इसी आधार पर पुरुष भी सभी क्षेत्रों में उपयुक्त नहीं माना जा सकता ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भारत में नारी की वेदों से वर्तमान अवस्था पर भारतीय चिन्तकों ने गम्भीरता से निरन्तर अध्ययनकर उसे व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया है । माता, पत्नी, बहिन तथा पुत्री के रूप में उसका सदैव आदर किया गया है । वैदिक काल से पुरुष तथा नारी के संबंध में न किसी का पूर्ण स्वतंत्र या अलग मानकर, बल्कि एक दूसरे का पूरक, दोनों में मिलाकर समाज की सबसे छोटी इकाई माना गया है । दोनों में एकतत्व माना गया, परन्तु प्रकृति के अनुरूप पूर्ण समानता नहीं ।[92] विवाह को एक महान् तथा पवित्र संस्कार माना गया है, जिस पर परिवार, समाज, राष्ट्र का ढाँचा टिका है। मध्य तथा ब्रिटिश शासनकाल में महिला की अवस्था में गिरावट अवश्य हुई, परन्तु भारतीय सुधारकों तथा सामाजिक आन्दोलनों ने नारी-जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अपनायी । अनेक सामाजिक तथा न्यायिक क़ानून पारित किये गये । नारी-शक्तिकरण तथा आधुनिक नारीवादियों द्वारा स्त्री-पुरुष के संबंधों में अलगाव के कुछ प्रयत्न भी हुए । भारत के जनमानस को यूरोप तथा अमेरिका के तथाकथित स्वातन्त्र्य से भी जोड़ा गया, परन्तु भारतीय नारीत्व ने इसे स्वीकार न किया । आज पुन: भारतीय समाज पुन: वैदिक समाज के अनुकूल भारत के मातृत्व के भाव, पत्नी के सखाभाव, बहिनों के प्रति उदात्त आदर तथा पुत्रियों के

91. एस० राधाकृष्णन, द *ग्रेट विमेन ऑफ इंडिया*, देखें इंट्रोडक्सन, XV

92. आर०एम० दास, पूर्वोक्त, पृ० 42



प्रति स्नेही व्यवहार को न भूलना है । आवश्यकता है कि भारतीय नारी का विकास हज़ारों वर्षों के भारतीय जीवन-मूल्यों के आधार पर हो, न कि पाश्चात्य की आँधी में प्रभावित हो । पर समयानुसार आवश्यक परिवर्तन तथा संशोधन अनिवार्य हो । पुरानी नींव, नया निर्माण हमारी वैश्विक तथा वैज्ञानिक दृष्टि होनी अवश्य चाहिये ।